Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय ज्ञान परम्परा में ज्ञान और विज्ञान

डॉ. शिवाकान्त तिवारी*

* प्रभारी प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, मोहन बड़ोदिया, शाजापुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारतीय ज्ञान परम्परा में प्राचीनकाल से ही स्व-कल्याण के साथ-साथ विश्व-कल्याण की भावना से कार्य किया जाता था। भारतीय वेद ज्ञान का अपार भण्डार हैं। भारतीय शिक्षा की गुरूकुल प्रणाली प्राचीनता के साथ उत्कृष्टता को भी अपने आप में समेटे हुए थी जिसमें विद्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास का कार्य किया जाता था। नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों में हजारों विद्यार्थी और शिक्षक अध्ययन और अध्यापन के कार्य में संलग्न रहते थे। विद्यार्थी और शिक्षक का अनुपात उस समय के सभी विश्वविद्यालयों में उत्कृष्ट स्तर का था।

प्राचीनकाल में भारतीय सैन्य विज्ञान काफी उन्नत अवस्था में था। युद्ध में अनेक प्रकार के हथियारों के साथ-साथ दिव्यास्त्रों का भी प्रयोग किया जाता था। कई हथियार वर्तमान युग के परमाणु बमों से भी घातक और विनाशक थे। युद्ध में पूरी नैतिकता का पालन किया जाता था। खगोल विज्ञान के क्षेत्र में भारतीयों का अध्ययन उच्च स्तरीय और सटीक था। पृथ्वी की आकृति, सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण सम्बन्धी भारतीय गणनाऐं बिलकुल सटीक थीं। आर्यभट्ट, वाराहमिहिर जैसे विद्धानों के सिद्धान्त आज भी अचम्भित करते हैं। आचार्य चरक और सुश्रुत ने आयुर्वेद के क्षेत्र में भारत को शीर्ष स्थान पर पहुँचा दिया था। प्राचीन कालीन नाड़ी शोधन की क्रिया अद्धितीय थी। धातुकार्य में भारत ने ऐसी उत्कृष्टता प्राप्त कर ली थी जो आज भी लोगों को चकित करती है। महरोली का लौह स्तम्भ इसका जीता जागता प्रमाण है। लगभग सभी धातुओं का प्रयोग प्राचीन भारत में प्रचलन में था। गणित के क्षेत्र में भारत ने विश्व को शून्य और दशमलव प्रणाली देकर अध्ययन को एक नई दिशा दी। वैदिक गणित आज भी अधिक सटीक सिद्ध होता है। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में महर्षि कणाद जैसे विद्धानों ने 600 ईसा पूर्व ही परमाणु की खोज कर ली थी। रसायन शास्त्र के क्षेत्र में तत्कालीन कीमियागार रसायनों के नये-नये यौगिक बनाने में महारत हासिल कर चुके थे। प्राचीन भारत की ज्ञान विज्ञान की इस धरोहर को वर्तमान में सहेजने और नये-नये शोधों के माध्यम से और अधिक समृद्ध करने की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – ज्ञान परम्परा, गुरूकुल, आयुर्वेद, खगोल विज्ञान, धातुकर्म, सैन्य विज्ञान, वैदिक काल।

प्रस्तावना – भारतीय ज्ञान परम्परा विश्व में प्राचीनतम् है। भारतीय ज्ञान का लक्ष्य मात्र सूचना प्राप्त करना नहीं है, अपितु ज्ञान के माध्यम से स्व कल्याण के साथ-साथ विश्व कल्याण इसका परम लक्ष्य है। ज्ञान के माध्यम से ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। भारतीय ज्ञान परम्परा कभी भी संकुचित नहीं रही। इसमें सदैव विश्व कल्याण की भावना निहित रही।

अयं निज: परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैवकुटुम्बकम्।।[1]

भारत में वैदिक काल के पूर्व से ही ज्ञान परम्परा प्रवाहमान थी। वेदों की रचना के द्वारा इसे एक व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया गया। वैदिक काल को ज्ञान परम्परा का अरुणोदय काल कहा जाता है। ऋग्वेद सहित चारों वेदों को विश्व में ज्ञान की पहली संहिता भी कहा जाता है। इसके पश्चात् उपनिषदों के माध्यम से यह धारा आगे बढ़ती है जो बुद्ध व जैन दर्शन में भी परिलक्षित होती है। इसी परम्परा में पाणिनि ने विश्व के पहले व्याकरण की रचना की। महर्षि पतंजलि ने योग के प्रमुख ग्रन्थ योगसूत्र की रचना की। कौटिल्य ने विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ अर्थशास्त्र लिखा। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र की रचना की और वात्स्यायन ने कामसूत्र लिखा। आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में चरक और सुश्रुत द्वारा रचनाएँ की गयीं। इन सभी रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में पूर्व के आचार्यों का उल्लेख करते हुए भारतीय ज्ञान परम्परा की प्राचीनता को रेखांकित किया है। शून्य की खोज भी वैदिक काल में की जा चुकी थी। प्राचीनकाल में भारतीय ज्ञान परम्परा ज्ञान के सभी क्षेत्रों में अपने उत्कर्ष पर पहुँच चुकी थी। जिसमें से प्रमुख निम्न प्रकार हैं:-

शिक्षा व्यवस्था – ज्ञान के क्षेत्र में शिक्षा का स्थान सर्वोपरि है। प्राचीन भारत में शिक्षा का व्यापक प्रचार प्रसार था। गुरूकुल प्रणाली से शिक्षा प्रदान की जाती थी जिसमें विद्यार्थी अपने घर को छोड़कर गुरू के आश्रम में निवास करता था और शिक्षा ग्रहण करता था। वैसे तो बालक की प्रथम शिक्षक उसकी माँ होती है जिससे वह सीखने की प्रक्रिया प्रारम्भ करता है। बाद में परिवार के अन्य सदस्यों व मित्र समूहों से अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त होती है। प्राचीन भारत में आठ वर्ष की आयु पूर्ण करने के पश्चात् विद्यार्थियों को गुरूकुल में भेज दिया जाता था जहाँ वह गुरू के सानिध्य में रहकर बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के सम्पूर्ण प्रकार की विद्या प्राप्त करता था और वहाँ से निकलने के उपरान्त वह इधर उधर भटकने के बजाए अपने पूर्व निर्धारित कार्य में संलग्न हो जाता था। रामायण काल में भगवान राम भी शिक्षा प्राप्त करने के लिए अपने गुरू वशिष्ठ के आश्रम में गये थे।

गुरू गृह गए पढ़न रघुराई।
अल्पकाल विद्या सब पाई।।[2]

गुरूकुल बस्ती से बाहर एकान्त में होते थे। जहाँ पर एकान्त एवं शान्त वातावरण में शिक्षा का आदान-प्रदान किया जाता था। गुरूकुल में रहते हुए विद्यार्थी

जीवन की सभी चुनौतियों का सामना करने का प्रशिक्षण प्राप्त करता था।

सामान्य गुरूकुल एवं आश्रमों के साथ-साथ प्राचीन भारत में कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध शिक्षा के केन्द्र थे जिनकी ख्याति पूरे विश्व में व्याप्त थी। इनमें से उज्जयिनी, नालन्दा, तक्षशिला, विक्रमशिला, वल्लभी, उदांतपुरी, सोमपुरा, पुष्पगिरी, तेलहाड़ा, ओदंतपुर, शारदापीठ, जगददला, नागार्जुन कोंडा, वाराणसी, कांचीपुरम, मणिखेत आदि प्रमुख विश्वविद्यालय थे। द्वापर युग में उज्जयिनी (वर्तमान उज्जैन) शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ स्थित महर्षि सांदीपनि के आश्रम में भगवान श्रीकृष्ण एवं सुदामा के अध्ययन करने का वर्णन ग्रन्थों में मिलता है। नालन्दा विश्वविद्यालय प्राचीन भारत का सबसे विख्यात और महत्वपूर्ण शिक्षा का केन्द्र था। यह वर्तमान बिहार प्रदेश में पटना से लगभग 90 कि.मी. की दूरी पर स्थित था।

चीनी यात्री हवेनसांग के यात्रा विवरण से पता चलता है कि यहाँ पर 10,000 विद्यार्थी और 2000 शिक्षक थे। यहाँ पर सम्पूर्ण भारत के अलावा कोरिया, जापान, चीन सहित कई देशों के विद्यार्थी विद्याध्ययन करने आते थे। इस विश्वविद्यालय का पूरा परिसर विशाल दीवार से घिरा था और प्रवेश के लिए एक मुख्य द्वार था। इसमें 300 से अधिक कक्ष अध्ययन के लिए थे।

तक्षशिला विश्वविद्यालय वर्तमान पाकिस्तान के रावलपिंडी में स्थित था। उस समय यह गांधार राज्य की राजधानी थी। यहाँ पर 10,000 से अधिक विद्यार्थी अध्ययन करते थे जिनमें से कई विदेशी विद्यार्थी भी होते थे। अनुशासन अत्यन्त सख्त था तथा गलती करने पर राजकुमारों को भी सजा दी जाती थी। विक्रमशिला विश्वविद्यालय वर्तमान बिहार राज्य के भागलपुर शहर से 40 कि.मी. दूर पर स्थित था। यहाँ पर 1000 विद्यार्थी और 100 शिक्षक थे। वल्लभी विश्वविद्यालय गुजरात राज्य में था। यहाँ पर मुख्य रूप से धर्मनिरपेक्ष विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। उदांतपुरी विश्वविद्यालय वर्तमान बिहार राज्य में स्थित था। यहाँ लगभग 12000 विद्यार्थियों के अध्ययन की व्यवस्था थी। पुष्पगिरी विश्वविद्यालय वर्तमान उड़ीसा राज्य में स्थित था। यह बौद्ध शिक्षा का सबसे प्राचीन केन्द्र था। इसकी स्थापना कलिंग राजाओं ने की थी। काशी वर्तमान में वाराणसी के नाम से भी जाना जाता है। यह वैदिककाल से हिन्दू धर्म की शिक्षा के लिए प्रसिद्ध था।

प्राचीन भारत के सभी शिक्षण केन्द्रों में शिक्षक विद्यार्थी अनुपात अत्यन्त उच्च स्तर का देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए नालन्दा विश्वविद्यालय में 10,000 विद्यार्थियों के अध्यापन के लिए 2000 शिक्षकों की व्यवस्था थी अर्थात् शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात 1:5 का था।

सैन्य विज्ञान – प्राचीन काल से ही भारत में सैन्य विज्ञान काफी विकसित अवस्था में था। सेना में मुख्य रूप से पैदल, अश्व, रथ और हाथी सहित चार भाग होते थे। रामायण और महाभारत काल में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है। धनुष-बाण, तलवार, भाला, गदा आदि मुख्य हथियार होते थे। सामान्य अस्त्र शस्त्रों के साथ-साथ पाशुपतास्त्र, ब्रम्हास्त्र, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, पर्जन्य, वायव्य, पन्नग, गरुड़, बहमशिरा, एकाग्निघ्न और अमोघास्त्र जैसे दिव्यास्त्रों का प्रयोग भी किया जाता था। आग्नेय अस्त्र से अग्नि वर्षा की जाती थी तो पर्जन्य अस्त्र से वर्षा करायी जाती थी। रावण के साथ युद्ध में भगवान राम के अग्निबाण का प्रयोग करने का प्रसंग आता है।

पावक सर छाडेउ रघुबीरा।
छन महुँ जरे निसाचर तीरा।।[3]

वायव्य अस्त्र से भयंकर आँधी तूफान पैदा किया जा सकता था। ब्रम्हास्त्र का प्रभाव वर्तमानकाल के परमाणु बमों से भी भयानक होता था। इनके द्वारा पूरी सृष्टि का विनाश किया जा सकता था। ये दिव्यास्त्र जितने शक्तिशाली थे उनको प्राप्त करना उतना ही मुश्किल था। इन्हें प्राप्त करने के लिए कठिन तपस्या एवं साधना करनी पड़ती थी। विरोधी सैनिकों से बचाव के लिए कई प्रकार के कवच एवं सुरक्षा उपकरणों का प्रयोग किया जाता था। सबसे अच्छे योद्धा तीव्रगामी रथों पर सवार रहते थे। युद्ध कौशल की दृष्टि से उन्हें भी रथी, अतिरथी और महारथी जैसे श्रेणियों में विभाजित किया जाता था। युद्ध करने के कई नियम होते थे जिनका पालन सभी सेनाएं करती थीं। जैसे युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व शंखनाद करके चेतावनी देना, सूर्यास्त होने के बाद युद्ध समाप्त कर देना, किसी निहत्थे पर वार नहीं करना आदि। सामान्य तौर पर सभी सेनायें उक्त नियमों का पालन करती थीं, लेकिन कई अवसरों पर इनके उल्लंघन के दृष्टांत भी पाये जाते हैं। वर्तमान समय के सैन्य विज्ञान की तुलना में प्राचीन काल में सैन्य विज्ञान कई क्षेत्रों में अधिक विकसित अवस्था में था।

खगोल विज्ञान – भारतीय खगोल विज्ञान का प्रारम्भ वैदिककाल में हो गया था। उस समय के ऋषि, मुनि कई तरह के यज्ञ और अनुष्ठान मुहुर्त देखकर किया करते थे। शुभ लग्न का ज्ञान उन्हें खगोल विज्ञान के माध्यम से ही होता था। सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, सूर्य के उत्तरायण एवं दक्षिणायन स्थिति का ज्ञान प्राचीन समय से भारतीय विद्धानों को था। वैदिक काल में ही 'वेदांग ज्योतिष' नामक खगोल विज्ञान के ग्रन्थ की रचना की गयी थी। आर्यभट्ट ने पाँचवी शताब्दी में सर्वप्रथम पृथ्वी के गोल होने एवं उसके अपनी धुरी पर घूमने की बात कही। इन्होंने सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण के वास्तविक कारणों का पता लगाया और इससे सम्बन्धित कई वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। 'आर्यभट्टीय' एवं 'आर्य सिद्धान्त' आर्यभट्ट के प्रमुख ग्रन्थ थे। वाराहमिहिर ने छठी शताब्दी में 'पंचसिद्धान्तिका', सूर्यसिद्धान्त, वृहत्संहिता और वृहत्जातक नामक ग्रन्थों की रचना की। वाराहमिहिर ने गुरूत्वाकर्षण शक्ति की ओर संकेत करते हुए कहा कि कोई ऐसी शक्ति है जो वस्तुओं को पृथ्वी के धरातल से बाँधकर रखती है। बाद में ब्रम्हगुप्त नामक विद्धान ने भी गुरूत्वाकर्षण शक्ति की ओर इशारा करते हुए कहा कि यवस्तुएँ पृथ्वी की ओर गिरती हैं क्योंकि पृथ्वी की प्रकृति है कि वह उन्हें अपनी ओर आकर्षित करे। 'ब्रहमस्फुट सिद्धान्त' एवं 'खण्ड खाद्यक' इनके प्रमुख ग्रन्थ हैं। ब्रहमगुप्त ने विभिन्न ग्रहों की गति और स्थिति तथा उनके उदय और अस्त होने की गणना करने की विधियाँ बतायी हैं। इनका जोर अध्ययन की प्रत्यक्ष वेध की तरफ अधिक था। इनके अनुसार यदि गणना और वेध में भिन्नता हो तो वेध को सही मानना चाहिए।

बारहवीं शताब्दी में भास्कराचार्य खगोल विज्ञान के प्रसिद्ध विद्धान हुए। इन्होंने 'सिद्धान्त शिरोमणि' एवं 'करण कुतूहल' नामक ग्रन्थों की रचना की। इनकी तात्कालिक गति की अवधारणा से विभिन्न ग्रहों की गति की सही गणना करना आसान हो गया। भारतीयों की खगोल विज्ञान सम्बन्धी जानकारी इतनी अधिक उन्नत थी कि प्राचीनकाल से भारतीय पूजा पद्धति में नौ ग्रहों की पूजा करने का विधान है जबकि नवें ग्रह की खोज पाश्चात्य विद्धानों द्वारा काफी बाद में की गयी।

आयुर्वेद – आयुर्वेद प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति है। इस पद्धति में जटिल से जटिल रोगों का इलाज किया जा सकता है। आयुर्वेद में प्राकृतिक रूप से प्राप्त जड़ी बूटियों एवं वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है। जिनका कोई दुष्प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता है जबकि एलोपैथी में बिना दुष्पप्रभाव की दवाईयाँ विरली ही हैं। आयुर्वेद का प्रारम्भ भारत में ही हुआ था। चरक संहिता,

सुश्रुत संहिता और अष्टांग हृदयम् नामक आयुर्वेद के प्राचीन ग्रंथ है जिनकी रचना आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ही की जा चुकी थी। योग को भी आयुर्वेद का ही भाग माना जाता है। योग एवं आयुर्वेद का उपयोग करके असाध्य रोगों का उपचार किया जा सकता है। आयुर्वेद के अनुसार मानव शरीर का निर्माण पाँच तत्वों द्वारा हुआ है जो वायु, जल, आकाश, पृथ्वी और अग्नि हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी लिखा है।

'क्षिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा।।'[4]

उक्त पांच तत्वों के असंतुलन से ही शरीर में रुग्णता पैदा होती है जिसका उपचार इन पंच महाभूतों में पुन: संतुलन करके किया जा सकता है। इसी प्रकार शरीर के तीन मूल द्रव्य वात, कफ, पित्त का असंतुलन भी शरीर को बीमार करता है और इनके संतुलन द्वारा बीमारी को दूर किया जा सकता है। आजकल किसी रोग के उपचार से पहले कई प्रकार के चिकित्सकीय परीक्षण कराने होते हैं जबकि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के द्वारा मात्र नाड़ी परीक्षण से रोगों का निदान किया जा सकता है। आयुर्वेद चिकित्सा में पंच कर्म का भी प्रमुख स्थान है। महर्षि सुश्रुत द्वारा रचित 'सुश्रुत संहिता' को शल्य चिकित्सा का प्राचीनतम ग्रन्थ माना जाता है। आज से लगभग तीन हजार वर्ष पूर्व महर्षि सुश्रुत द्वारा नाक का उपचार ऐसी विधि से किया जाता था जिसे वर्तमान काल में प्लास्टिक सर्जरी के नाम से जाना जाता है। प्राचीन भारत के आयुर्वेद का इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण एवं समृद्ध रहा है। वर्तमान में इस क्षेत्र में और अधिक अध्ययन और अनुसंधान की आवश्यकता है।

धातुकर्म – भारत के धातुकर्म का इतिहास अत्यन्त प्राचीन एवं गौरवशाली रहा है। यहाँ पर धातुओं को गलाने और मिश्रधातु बनाने का कार्य 3000 ईसा पूर्व से किया जाता रहा है। भारत के लोहे और इस्पात की माँग औजारों के निर्माण के लिए विदेशों में काफी अधिक थी। भूमध्यसागर के लोगों द्वारा भारत से इस्पात मँगाने का प्रमाण कुछ पुस्तकों में मिलता है। भारत दूसरी शताब्दी से ही ईरान, अरब और दमिश्क आदि देशों को इस्पात का निर्यात करता था जहाँ पर उनसे हथियार बनाये जाते थे। इनमें से दमिश्क की तलवारें काफी प्रसिद्ध हुईं। दिल्ली में महरौली में स्थित लौह स्तम्भ भारतीय धातुकर्म की उन्नति का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं जिसमें 1600 वर्षों के पश्चात् भी जंग नहीं लगा है। जाँच से ज्ञात हुआ है कि इस स्तम्भ का स्टील अत्यन्त उच्च किस्म का है और इसमें कार्बन की मात्रा काफी कम है। इस पूरे स्तम्भ में एक भी जोड़ नहीं पाया जाना आश्चर्यचकित करता है।

इस्पात के निर्माण के अतिरिक्त अन्य धातुओं के उपयोग में भी भारत काफी अग्रणी था। पुरातात्विक खोजों में प्राप्त चाँदी की कलाकृतियाँ वैदिक संस्कृति की प्राचीनता को प्रमाणित करती है। ताँबे के शुद्धिकरण की क्रिया भी भारत में 3000 ईसा पूर्व से ही ज्ञात थी। सोने का उपयोग भी भारत में महाभारत काल के पूर्व से ही होता रहा है। युधिष्ठिर द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में यहाँ के कुछ राजाओं ने एक विशिष्ट प्रकार का स्वर्ण चूर्ण युधिष्ठिर को भेंट किया था जिसे पिपीलिका गोल्ड कहा जाता था। काँसे का उपयोग भी इस समय औजार, हथियार, घरेलू बर्तन और अन्य सौन्दर्य सामग्री बनाने में किया जाता था। काँच, चीनी मिट्टी, सीमेंट सहित कई यौगिक और मिश्र धातुओं के निर्माण का ज्ञान भी इस समय भारतीयों को था।

गणित – भारतीय गणित का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और प्रतिष्ठापूर्ण रहा है। भारतीय गणित का प्रारम्भ हड़प्पाकाल (3300 – 1300 ईसा पूर्व) में हो गया था। इस दौरान भारतीयों ने संख्याओं के दशमलव पर आधारित प्रणाली की खोज कर ली थी। ज्यामिति और त्रिकोणमिति के मूल सिद्धान्त भी अस्तित्व में आ गये थे। वैदिककाल में गणित शब्द का प्रयोग तो नहीं मिलता है लेकिन गण, गणपति और गणया शब्द का उल्लेख ऋग्वेद में किया गया है। गणित शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम वेदांग ज्योतिष में सामने आता है जो निम्नलिखित श्लोक से स्पष्ट होता है।

यथा शिखा विहाय मयूराणां नागाणां मणयो यथा,
तद्वद् वेदांगशास्त्राणां गणितं मूहिर्न वर्तने। [5]

वैदिककाल में आर्य जाति यज्ञ में संलग्न रहती थी। यज्ञ का सटीक अनुष्ठान काल ज्ञात करने के लिए गणित का प्रयोग किया जाता था। वेदों, उपनिषदों, संहिताओं आदि में गणित का उन्नत स्वरूप दिखाई देता है जो बाद में रामायण, महाभारत काल में भी दृष्टिगोचर होता है। गणित के विकास में आर्यभट्ट (476 ई.) का योगदान महत्वपूर्ण है जिन्होंने गणना को स्वर तथा व्यंजनों के साथ जोड़कर बड़ी संख्याओं को सूत्रों में कहने की प्रणाली का विकास किया। शून्य और दाशमिक अंक प्रणाली विश्व को भारत की सबसे अमूल्य देन है।

भौतिक विज्ञान और रसायन विज्ञान – प्राचीन भारत में भौतिकी और रसायन के प्रारम्भिक प्रयोग हुए लेकिन इसको सैद्धान्तिक स्वरूप अपेक्षाकृत कम दिया गया। लेकिन बाद में इस दिशा में भी अभूतपूर्व कार्य किये गये। महर्षि कणाद को परमाणुशास्त्र का जनक कहा जाता है। ईसा से 600 वर्ष पूर्व ही महर्षि कणाद ने परमाणु को तत्व की सबसे छोटी अविभाज्य इकाई बताया और परमाणु नाम का प्रयोग भी उन्हीं के द्वारा किया गया।

भारत में रसायन विज्ञान की भी एक उन्नत परम्परा रही है। आयुर्वेद में रसायन शब्द का प्रयोग खूब किया गया है। प्राचीनकाल में ही पारे को शोधित करके उससे विभिन्न प्रकार के भस्म, चूर्ण आदि का निर्माण औषधियों के लिए किया जाता था। प्राचीन समय में रसायन शास्त्रियों को कीमियागार कहा जाता था जो रसायनों के जोड़ तोड़ से नये योगिकों का निर्माण करते थे। दिल्ली में महरोली का बौद्ध स्तम्भ तत्कालीन रसायन विज्ञान की उन्नत अवस्था का प्रमाण है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि प्राचीन समय में भारत ज्ञान और विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी था और सही मायने में विश्वगुरू के पद पर आसीन था। बाद में कई कारणों से, विशेषकर विदेशी आक्रमणकारियों के कारण, भारत ज्ञान के क्षेत्र में पिछड़ता दिखायी दिया। लेकिन यहाँ प्रतिभाओं की कमी कभी नहीं रही। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत अपने स्वर्णिम इतिहास की ओर पुन: तीव्रता से बढ़ रहा है और कई क्षेत्रों में अपनी प्राचीन प्रतिष्ठा के अनुरूप विश्व गुरू के पद पर आसीन हो चुका है। आज भारत विश्व की पाँचवी अर्थव्यवस्था बन चुका है और विश्व की तीसरी अर्थव्यवस्था बनने की ओर बड़ी तीव्रता से अग्रसर है। यदि सभी भारतवासी पूरी ईमानदारी एवं लगन से प्रयास करें तो वह दिन दूर नहीं जब भारत सभी क्षेत्रों में विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त कर लेगा और पुन: विश्व गुरू के पद पर आसीन हो जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महोपनिषद्, अध्याय 6, मंत्र 71
2. रामचरित मानस, बालकाण्ड
3. रामचरित मानस, लंकाकाण्ड
4. रामचरित मानस, किष्किन्धा काण्ड
5. वेदांग ज्योतिष, आचार्य लगध, श्लोक सं. 4